Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sanskrit Literature
Research Link - 155, Vol - XV (12), February - 2017, Page No. 46-48
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

काव्य-सर्जन में मूल कारण (संस्कृत काव्यशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में)

प्रस्तुत शोधपत्र में काव्य-सर्जन में मूल कारण का अध्ययन, संस्कृत काव्यशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में किया गया है। साहित्यिक आचार्यों को प्रतिभा का 'स्वतः स्फुरित' रुप ही मान्य है, जो दर्शन एवं वर्णन की द्विविध शक्तियों से युक्त है। 'प्राक्तनाद्यतन' संस्कारों से परिपक्व प्रतिभा को कविशक्ति मानते हुए वे यह मानते हैं कि बिना दैवी कृपा और पुण्य कर्मों के कोई 'सुकवि' या महाकवि नहीं बन सकता। राजशेखर ने 'काव्यमीमांसा' में एक स्थल पर कहा है, 'बुद्धिमत्ता, काव्य एवं उसके अंगभूत विधाओं का अभ्यास तथा कवियों का उपनिषत् (शक्ति) ये तीनों एक स्थान पर अत्यंत दुर्लभ है।'

डॉ.तरुण कुमार शर्मा

संस्कृत–काव्यशास्त्रियों ने काव्य–सर्जन के सन्दर्भ में 'शक्ति' एवं 'प्रतिभा' का उल्लेख किया है, इसके साथ ही काव्य–हेतुओं के सन्दर्भ में उन्होंने 'व्युत्पत्ति' एवं 'अभ्यास' को भी परिगणित किया है। व्युत्पत्ति को व्याख्यायित करते हुए राजेशेखर ने इसे 'बहुज्ञता' एवं 'अनुचितानुचितविवेक' मम्मट ने लोकशास्त्र एवं काव्य के अवलोकन से होने वाली 'निपुणता', केशव ने 'नाना तन्त्रों का ज्ञान', अलटारमहोदधिकार ने 'शास्त्रादि में प्राप्त प्रागल्भ्य', वाग्भटालंकार ने शब्द, अर्थ, धर्म एवं काम आदि शास्त्रों में होने वाली सामान्य प्रतिपत्ति तथा द्वितीय वाग्भट ने विभिन्न क्षेत्रों की 'निपुणता' कहा है। भामह ने स्पष्टतया कहा है, ऐसा कोई भी शिल्प, विद्या, कला एवं शास्त्र नहीं, जो काव्य का अंग न हों।

आचार्य मग्ल अभ्यास की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि यह निरन्तर परिशीलन का ही दूसरा नाम है। काव्यज्ञ से शिक्षा लेकर उनका परिशीलन ही मम्मट और वाग्भट के अनुसार 'अभ्यास' है। 'अलटारमहोदधि' में पुनः पुनः प्रवृत्ति को अभ्यास कहा गया है। वाग्भटालंकार ने इस सम्बन्ध में कहा है कि गुरुओं के पास बैठकर सादर काव्य–क्रिया में लगे रहना ही 'अभ्यास' है।

प्राचीन आचार्यों ने प्रतिभा, व्युत्पत्ति एवं अभ्यास तीनों को काव्य हेतुओं में परिगणित किया है तथा प्रतिभा को कवित्व का बीज माना है। भामह स्पष्टतया कहते हैं –

'काव्यं तु जायते जातु कस्यचित्प्रतिभावतः'। (1)

किसी प्रतिभावान् में ही काव्य की उत्पत्ति हो सकती है।

वामन ने प्रतिभान को कवित्व बीज कहा है। ''कवित्वबीजं प्रतिभानम्'' ।(2) आचार्य मम्मट ने शक्ति, निपुणता तथा अभ्यास इन तीनों के समुदित रूप को काव्य का हेतु स्वीकार किया है – ''इति त्रयः समुदिताः, न तु व्यस्ताः, तस्य काव्यस्योभ्दवे निर्माणे समुल्लासे च हेतुर्न तु हेतवः'' ।(3)

नाट्याचार्य भरतमुनि ने रस को काव्य रूपी वृक्ष का मूल माना है। वे कहते हैं,

यथा बीजाद् भवेद् वृक्षो वृक्षात्पुष्पं फलं यथा।
तथा मूलं रसाः सर्वे तेभ्यो भावा व्यवस्थिताः।। (4)

जिस प्रकार वृक्ष के मूल में बीज स्थित है, जिससे क्रमशः वृक्ष, पुष्प तथा फल होते हैं। उसी प्रकार रस मूल है, जिस पर भावों की स्थिति अवस्थित है।

ध्वनिवादी एवं रसवादी आचार्यों ने भी रस को ही काव्य का मूल माना है, जो प्रतिभा का विषयीभूत है। आनन्दवर्धन कहते हैं–

सरस्वती स्वादु तदर्थवस्तु निष्यन्दमाना महतां कवीनाम्।
अलोकसामान्यमभिव्यनक्ति परिस्फुरन्तं प्रतिभाविशेषम्।।(5)

राजशेखर ने आनन्दवर्धन के मत को 'काव्यमीमांसा' में इस प्रकार उद्धृत किया है–

'प्रतिभा व्युत्पत्त्योः प्रतिभा श्रेयसी इत्यानन्दः' ।(6) अभिनवगुप्त भी 'प्रतिभान' को ही कवि की मूल शक्ति मानते हैं। वे कहते हैं,

'शक्तिः प्रतिभानं वर्णनीयवस्तुनूतनोल्लेखशालित्वम्' ।(7) शक्ति (प्रतिभान) वर्णनीय वस्तु के सम्बन्ध में नयी बात की उल्लेख मिलता है। ध्वन्यालोक लोचन टीका के आरम्भ में नमस्कारात्मक मंगल में कला के उन उत्स पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कवि की 'प्रतिभा' को 'प्रख्या' और 'वर्णनाशक्ति' को 'उपाख्या' की संज्ञा दी है, वे कहते हैं – जो कारण–सामग्री के लेश के बिना अपूर्ववस्तु को उत्पन्न करता है, फैला देता है और पत्थर के समान नीरस जगत् को अपने रसभार से रसवान् बना देता है और क्रम से प्राख्या और उपाख्या के प्रसर ह्रद्य होता हुआ वस्तु जात को शासित करता है, वह कवि और सहृदय द्वारा आख्यात सरस्वती का तत्त्व विजयी है।(8)

ध्वन्यालोक के प्रथम उद्योत के अन्तिम श्लोक में उन्होंने

प्रवक्ता (संस्कृत विभाग), अतर्रा पी.जी.कॉलेज, अतर्रा (बाँदा), उत्तरप्रदेश

प्रतिभा को शिव की शक्ति की भाँति अपनी आत्मा में विश्रान्त होने का उल्लेख करते हुए कहा है,

यदुन्मीलन शक्त्यैव विश्वमुन्मीलति क्षणात्।
स्वात्मायतनयविश्रान्तं तां वन्दे प्रतिभां शिवाम्।। (9)

आचार्य मम्मट ने यद्यपि शक्ति, निपुणता, लोकशास्त्र एवं काव्यादि का अवेक्षण काव्यज्ञों द्वारा शिक्षा तथा अभ्यास सभी को काव्य हेतुओं के रूप में उल्लिखित किया है, जैसा कि उन्होंने काव्यप्रकाश के प्रथम उल्लास में कहा है–

शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुभ्दवे।। (10)

आचार्य मम्मट ने सर्वप्रथम शक्ति का कथन किया है तथा यह कहकर कि व्युत्पत्तिकृत दोषों का संभरण शक्ति द्वारा हो जाता है। उन्होंने शक्ति की श्रेष्ठता मानी है। शक्ति की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा है,

''शक्तिः कवित्वबीजरूपः संस्कारविशेषः यां विना काव्यं न प्रसरेत् प्रसृतं वा उपहसनीयं स्यात्''। (11)

पण्डितराज जगन्नाथ ने प्रतिभा को ही काव्य का हेतु मानते हैं– *''प्रतिभैव केवला कविगता हेतुः।''* (12)

जैन आचार्य हेमचन्द्र तथा वाग्भट भी प्रतिभा को ही काव्य सृजन का मूलरूप स्वीकार करते हैं। वे कहते हैं –

व्युत्पत्त्याभ्याससंस्ता प्रतिभाऽस्य हेतुः।
प्रतिभैव च कारणम्।(13)

प्रतिभा या शक्ति को काव्य का मूल हेतु मानने वाले आचार्यों के मतों का उपस्थापन करने के साथ ही, हमें इस तथ्य को उपेक्षित नहीं कर देना है, कि कुछ आचार्य ऐसे भी हुए हैं, जिन्होंने व्युत्पत्ति एवं अभ्यास को प्रतिभा से श्रेष्ठतर माना है। राजशेखर आचार्य मंगल का कथन इस सन्दर्भ में उद्धृत करते हैं,

'व्युत्पत्तिः श्रेयसीति मंगलः।'

वे आगे कहते हैं – *अभ्यास इति मंगलः। अविच्छेदेन शीलनमभ्यासः। स हि सर्वगामी सर्वत्र निरतिशयं कौशल माधत्ते।*(14) मंगल नामक विद्वान् का मत है कि काव्य निर्माण के लिए अभ्यास ही प्रधान कारण है। निरन्तर अनुशीलन का नाम अभ्यास है। अभ्यास सभी विषयों के लिए आवश्यक है और उसके द्वारा उत्कृष्टतम कुशलता प्राप्त होती है।

राजशेखर समाधि एवं अभ्यास को शक्ति का उद्भावक घोषित करते हुए कहते हैं,

'समाधिरान्तरः प्रयत्नो बाह्यस्त्वभ्यासः तावुभावपि शक्तिमुरासयतः। 'सा केवलं काव्ये हेतुः' इति ययावरीयः।(15)

वास्तव में समाधि या एकाग्रता आन्तरिक प्रयत्न है और अभ्यास बाह्य। समाधि और अभ्यास ये दोनों कवित्त्व को उत्पन्न करते हैं। यह शक्ति ही काव्य निर्माण में प्रधान होती हैं। आचार्य दण्डी 'नैसर्गिकी प्रतिभा' श्रुत (व्युत्पत्ति) एवं अभियोग (अभ्यास) तीनों को काव्य का कारण मानते हैं, लेकिन इसके साथ वे यह भी कहते हैंख् जिस व्यक्ति में पूर्व वासनागुणानुबन्धी अद्भुत प्रतिभा न हो उसे निराश नहीं होना चाहिए। यदि ऐसा व्यक्ति भी व्युत्पत्ति प्राप्तिपूर्वक अभ्यास करता रहे, तो सरस्वती की पा उस पर होती है।

उपर्युक्त समस्त विवेचनों के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि कुछ अपवाद स्वरूप आचार्यों को छोड़कर प्रायः सभी ने प्रतिभा को ही कवित्त्वबीज माना है। अभ्यास एवं समाधि को शक्ति का जनक मानने वाले आचार्य राजशेखर भी अन्ततः यही मानते कि जिसे प्रतिभा नहीं है। उसके लिए प्रत्यक्ष दीखते हुए भी अनेक पदार्थ परोक्ष से प्रतीत होते हैं, और प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति के लिए अनेक अप्रत्यक्ष पदार्थ भी प्रत्यक्ष से प्रतीत होते हैं। कवि अपनी अलौकिक प्रतिभा से ही अप्रत्यक्ष भावों का प्रत्यक्ष के समान वर्णन करता है राजशेखर ने प्रतिभा के दो भेद (1) कारयित्री प्रतिभा और (2) भावयित्री प्रतिभा करते हुए कहा है कि कारयित्री प्रतिभा कवि की उपकारक होती है। कारयित्री प्रतिभा के पुनः उन्होंने तीन भेद बतलाए हैं :

(1) सहजा : पूर्वजन्म के संस्कारों से प्राप्त।

(2) आहार्या : जन्म, शास्त्र एवं काव्यों के अभ्यास से उत्पन्न।

(3) औपदेशिकी : मन्त्र, तन्त्र, देवता, गुरु आदि के वरदान से प्राप्त।

अन्ततः कहा जा सकता है कि भारतीय आचार्यों के अनुसार प्रतिभा कवित्वबीज है तथा व्युत्पत्ति एवं अभ्यास इसके संस्कार धर्म हैं। इस सन्दर्भ में कुन्तक का कथन उल्लेखनीय है :

प्राक्तनाद्यतनसंस्कारपरिपाकप्रौढ़ा प्रतिभा काचिदेव कविशक्तिः। (16)

पूर्वजन्म तथा अद्यतन वर्तमान जन्म संस्कारों से परिपक्व प्रतिभा ही कवि शक्ति कहलाती है तथा इसकी परिपक्वता में जन्मान्तरीय संस्कारों का होना तो अपेक्षित है ही, अर्जित संस्कारों का योगदान भी अनिवार्य है। अर्जित संस्कार व्युत्पत्ति एवं अभ्यास से प्राप्त होते हैं।

प्रतिभा शब्द की व्युत्पत्ति पर भी हम विचार करें तो पायेंगे कि इसमें भाव और करुणा दोनों का रूप समाहित है। 'प्रतिभा' शब्द की 'प्रति' उपसर्ग पूर्वक, दीप्ति अर्थ वाली 'भा' धातु एवं अङ प्रत्यय के योग से हुई हैं अङ् प्रत्यय 'भाव' एवं कारण दोनों अर्थों में प्रयुक्त होता है। इस दृष्टि से 'प्रतिभात्यर्थोऽनया सा प्रतिभेति' तथा 'प्रतिभानं प्रतिभेति' ये दो व्युत्पत्तियाँ हुई। पहली व्युत्पत्ति के अनुसार जिसमें पदार्थ का प्रतिभान करण और भाव दोनों रूप हैं। यदि हम जन्मान्तरीय संस्कार को कारण रूप मानकर काव्योपजीवी शब्दार्थ स्फुरण को कार्य रूप भी मानते हैं, तो यह तथ्य तो सिद्ध ही है कि दोनों प्रतिभा के दो पहलू हैं। अतः शक्ति को अगर हम प्रतिभा को कारण मानते हैं, तो वस्तु स्थिति यह है कि प्रतिभा का ही दूसरा नाम है।

प्रतिभा और भाक्ति को एक मानने वाले आचार्य रुद्रट कहते हैं :

मनसि सदा सुसमाधिनि विस्फुरणमनेकधाऽभिधेयस्य।
क्लिष्टानि पदानि च विभान्ति यस्यामसौ शक्तिः।।(17)

प्रतिभा का स्वरूप :

प्रसग्तः प्रतिभा के स्वरूप को जान लेना भी आवश्यक है। आचार्यों ने प्रतिभा को संस्कार विशेष तथा पुण्य कर्मों एवं दैवी पा से उद्भूत 'अन्तःस्फुरण' का प्रतिपादित किया है। वस्तुतः प्रतिभा की व्याख्या पर विभिन्न दर्शनों का प्रभाव है। प्रतिभा शब्द का प्रयोग अन्यत्र सहज समुद्भुत ज्ञान के रूप में तथा आगमों में 'पराशक्ति' के रूप में मिलता है।

रुद्रट, महिमभट्ट, भट्टतोत, राजशेखर एवं पण्डित राजजगन्नाथ प्रभृति आचार्य प्रतिभा को 'स्फुरण' रूप मानकर इसी प्रकार का स्वरूप प्रतिभा का निरूपण करते हैं। रुद्रट के अनुसार 'शक्ति' उसे कहते हैं, जिसके द्वारा सुसमाहित चित्त में निरन्तर अनेक प्रकार के अर्थ स्फुरित होते रहते हैं तथा अक्लिष्ट अर्थात् शीघ्र ही अर्थ प्रतिपादन में समर्थपदों का स्फुटन होता है।[18]

महिमभट्ट के अनुसार :

रसानुगुणशब्दार्थचिंतास्तिमित चेतसः।
क्षणं स्वरूप्सपर्शोत्था प्रज्ञेव प्रतिभा कवेः।। [19]

भट्टतौत कहते हैं :

प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता।
तदनुप्राणनाज्जीवद्वर्णनानिपुणाः कविः।। [20]

नव–नव रूपों का उन्मेष करने वाली प्रज्ञा का नाम है, प्रतिभा और ऐसी प्रतिभा से अनुप्राणित सजीव वर्णना में निपुण व्यक्ति का नाम है कवि।

राजशेखर प्रतिभा को परिभाषित करते हुए कहते हैं, प्रतिभा वह तत्त्व है, जो काव्योपजीवी शब्द राशि अर्थ सम्पत्ति अलंकार–पुंज उक्तिमार्ग और उसी प्रकार की अन्य वस्तुओं को भी प्रतिभासित करती है।[21]

अभिनवगुप्त प्रतिभा का स्वरूप–विवेचन वर्णित करते हुए कहते हैं, 'प्रतिभा अपूर्ववस्तुनिर्माणक्षमा प्रज्ञा' प्रज्ञा शक्ति एवं प्रतिभा के स्वरूप–विवेचन से यह लक्षित होता है कि प्रतिभा के दो कार्य हैं, एक तो यह कि वह परोक्ष वस्तुओं का भी अपरोक्ष की भाँति साक्षात्कार कर लेते हैं। यह साक्षात्कार लोकोत्तर होती है, तात्पर्य यह है कि कवि की आँखें वस्तु में निहित 'विशेष' का दर्शन कर लेती है, जिसे अपूर्व या नव–नव जैसे शब्दों द्वारा घोषित किया जाता है, दूसरा कार्य यह है कि कवि की प्रतिभा न केवल अर्थ को स्फुरित करती है, वरन् उसके वाहक पद को भी अतः वस्तु के स्वरूप बोध का अर्थ है। पदार्थ (पद अर्थ) बोध दर्शन एवं वर्णन की द्विविध भाक्तियाँ प्रतिभा से ही अनुस्यूत हैं। आचार्य जगन्नाथ ने 'काव्यघटनानुकूलशब्दार्थोपस्थितिः' काव्य घटनानुकूल शब्द एवं अर्थ की उपस्थिति प्रतिभा का ही कार्य उल्लिखित किया है। राजशेखर 'कारयित्री' और 'भावयित्री' को एक ही प्रतिभा के दो भेद मानते हैं। अर्थात् कवि भाव के रूप में दर्शन करता है और कारक के रूप में सर्जन करता है।

प्राचीन आचार्यों द्वारा की गयी प्रतिभा की व्याख्या से ज्ञात होता है कि उन्होंने सामान्य कवि को दृष्टि में रखकर प्रतिभा का स्वरूप निरुपित नहीं किया वरन् 'महाकवि' को दृष्टिपथ में रखकर किया। उनका कवि ऋषि कोटि का है, तभी तो उसे प्रजापति ('अपारेकाव्यसंसारे कविरेकः प्रजापतिः') की संज्ञा से अभिहित किया है। ये स्पष्टतया कहते हैं कि कवित्व शक्ति एक प्रकार का संस्कार है, जो 'प्राक्तनपुण्याभ्यास' के परिपाक से प्राप्त होता है। शक्ति को पुण्यलब्ध मानते हुए अग्निपुराणकार कहते हैं :

कवित्वं दुर्लभं लोके, शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा।
व्युत्पत्तिर्दुर्लभा तत्र, विवेकस्तत्र दुर्लभाः।।

ध्वनिकार आनन्दवर्धन कहते हैं :

''येषां सुकवीनां प्राक्तनपुण्याभ्यासपरिपाकवशेन' प्रवृत्तिस्तेषां परोपचरितार्थ– परिग्रहनिःस्पृहाणां स्वव्यापारो न क्वचिदुपयुज्यते। सैव भगवती सरस्वतीस्वयमभिम–तमर्थमाविभवियति एतदेव हि महाकवित्वं महाकवीनामित्योम्'।[22]

जिन सुकवियों की प्रवृत्ति पूर्वजन्म के पुण्य और अभ्यास के परिपाक के कारण होती है। दूसरों के द्वारा रचित अर्थ के ग्रहण में निःस्पृह सुकवियों को अपना व्यापार कहीं नहीं करना पड़ता। वहीं भगवती स्वयं अभिमत अर्थ को आविर्भूत करती है, यही महाकवियों का कवित्व है।

सारांशतः कहा जा सकता है कि साहित्यिक आचार्यों को प्रतिभा का 'स्वतः स्फुरित' रूप ही मान्य है, जो दर्शन एवं वर्णन की द्विविध शक्तियों से युक्त है। 'प्राक्तनाद्यतन' संस्कारों से परिपक्व प्रतिभा को कविशक्ति मानते हुए वे यह मानते हैं– कि बिना दैवी कृपा और पुण्य कर्मों के कोई 'सुकवि' या महाकवि नहीं बन सकता। राजशेखर ने काव्यमीमांसा में एक स्थल पर कहा है, 'बुद्धिमत्ता, काव्य एवं उसके अंगभूत विधाओं का अभ्यास तथा कवियों का उपनिषत् (शक्ति) ये तीनों एक स्थान पर अत्यन्त दुर्लभ है।'

सन्दर्भ :

(1) काव्यालटार 1/15.
(2) काव्यालटारसूत्रवृत्ति 1/13/16.
(3) काव्यप्रकाश प्रथम उल्लास, कारिका 3 का वृत्तिभाग।
(4) नाट्यशास्त्र 6/39.
(5) ध्वन्यालोक, 1/6.
(6) काव्यमीमांसा, पंचम अध्याय।
(7) ध्वन्यालोकलोचन टीका।
(8) ध्वन्यालोक लोचन 1/1.
(9) ध्वन्यालोक 1/11.
(10) काव्यप्रकाश प्रथम, उल्लास कारिका 3.
(11) काव्यप्रकाश, 1/3 वृत्ति
(12) रसगधर, पृष्ठ 9.
(13) काव्यानुशासन 1/2.
(14) काव्यमीमांसा, चतुर्थ अध्याय।
(15) काव्यमीमांसा, चतुर्थ अध्याय।
(16) वक्रोक्तिजीवितम्, 1/29.
(17) काव्यालंकार, 1/15.
(18) काव्यालंकार, 1/15.
(19) व्यक्तिविवेक, पृ0 390.
(20) काव्यानुशासन, हेमचन्द्र में उद्धृत, पृ0 3.
(21) काव्यमीमांसा, चतुर्थ अध्याय।
(22) ध्वन्यालोक, 4/17 वृत्तिभाग।

❁❁